International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Advanced Studies of Multidisciplinary Research and Analysis – November 2023
Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

त्रिविध पुराणों का विषयवस्तुगत विभाजन-ब्रह्म, वैष्णव एवं शैव पुराणों के संदर्भ में

Bhagwan Sahai Sharma

Assistant Professor, Govt. Shakambhar PG College, Sambhar Lake, Jaipur, Rajasthan, India

सार

पुराण, हिन्दुओं के धर्म-सम्बन्धी आख्यान ग्रन्थ हैं, जिनमें संसार - ऋषियों - राजाओं के वृतान्त आदि हैं। ये वैदिक काल के बहुत समय बाद के ग्रन्थ हैं। भारतीय जीवन-धारा में जिन ग्रन्थों का महत्त्वपूर्ण स्थान है उनमें पुराण प्राचीन भक्ति-ग्रन्थों के रूप में बहुत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। अठारह पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र मानकर पाप और पुण्य, धर्म और अधर्म, कर्म और अकर्म की गाथाएँ कही गयी हैं। कुछ पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विवरण दिया गया है।

'पुराण' का शाब्दिक अर्थ है, 'प्राचीन' या 'पुराना'।[1] पुराणों की रचना मुख्यतः संस्कृत में हुई है, किन्तु कुछ पुराण क्षेत्रीय भाषाओं में भी रचे गए हैं।[2][3] हिन्दू और जैन दोनों ही धर्मों के वाङ्मय में पुराण मिलते हैं। [2]

पुराणों में वर्णित विषयों की कोई सीमा नहीं है। इसमें ब्रह्माण्डविद्या, देवी-देवताओं, राजाओं, नायकों, ऋषि-मुनियों की वंशावली, लोककथाएँ, तीर्थयात्रा, मन्दिर, चिकित्सा, खगोल शास्त्र, व्याकरण, खनिज विज्ञान, हास्य, प्रेमकथाओं के साथ-साथ धर्मशास्त्र और दर्शन का भी वर्णन है। [3] विभिन्न पुराणों की विषय-वस्तु में बहुत अधिक असमानता है। इतना ही नहीं, एक ही पुराण के कई-कई पाण्डुलिपियाँ प्राप्त हुई हैं जो परस्पर भिन्न-भिन्न हैं। [2] हिन्दू पुराणों के रचनाकार अज्ञात हैं और ऐसा लगता है कि कई रचनाकारों ने कई शताब्दियों में इनकी रचना की है। इसके विपरीत जैन पुराण हैं। जैन पुराणों का रचनाकाल और रचनाकारों के नाम बताये जा सकते हैं।[2]

कर्मकाण्ड (वेद) से ज्ञान (उपनिषद्) की ओर आते हुए भारतीय मानस में पुराणों के माध्यम से भक्ति की अविरल धारा प्रवाहित हुई है। विकास की इसी प्रक्रिया में बहुदेववाद और निर्गुण ब्रह्म की स्वरूपात्मक व्याख्या से धीरे-धीरे मानस अवतारवाद या सगुण भक्ति की ओर प्रेरित हुआ। छोटे और बड़े के भेद से अठारह पुराण बताये गये हैं। १. ब्रह्मपुराण, २. पद्मपुराण, ३. विष्णुपुराण, ४. शिवपुराण, ५. भागवतपुराण, ६. भविष्यपुराण, ७. नारदपुराण, ८. मार्कण्डेयपुराण, ९. अग्निपुराण, १०. ब्रह्मवैवर्तपुराण, ११. लिंगपुराण, १२. वाराहपुराण, १३. स्कन्दपुराण, १४. वामनपुराण, १५. कूर्मपुराण, १६. मत्स्यपुराण, १७. गरुडपुराण और १८. ब्रह्माण्डपुराण[4]

पुराणों में वैदिक काल से चले आते हुए सृष्टि आदि सम्बन्धी विचारों, प्राचीन राजाओं और ऋषियों के परम्परागत वृत्तान्तों तथा कहानियों आदि के संग्रह के साथ साथ कल्पित कथाओं की विचित्रता और रोचक वर्णनों द्वारा साम्प्रदायिक या साधारण उपदेश भी मिलते हैं।

पुराणों में विष्णु, वायु, मत्स्य और भागवत में ऐतिहासिक वृत्त— राजाओं की वंशावली आदि के रूप में बहुत-कुछ मिलते हैं। ये वंशावलियाँ यद्यपि बहुत संक्षिप्त हैं और इनमें परस्पर कहीं-कहीं विरोध भी हैं, पर हैं बड़े काम की। पुराणों की ओर ऐतिहासिकों ने इधर विशेष रूप से ध्यान दिया है और वे इन वंशावलियों की छानबीन में लगे हैं।

परिचय

यद्यपि आजकल जो पुराण मिलते हैं उनमें से अधिकतर पीछे से बने हुए या प्रक्षिप्त विषयों से भरे हुए हैं तथापि पुराण बहुत प्राचीन काल से प्रचलित थे। बृहदारण्यक उपनिषद् और शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि गीली लकड़ी से जैसे धुआँ अलग अलग निकलता है वैसे ही महान भूत के निःश्वास से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वांगिरस, इतिहास, पुराणविद्या, उपनिषद, श्लोक, सूत्र, व्याख्यान और अनुव्याख्यान हुए। छान्दोग्य उपनिषद् में भी लिखा है कि इतिहास पुराण वेदों में पाँचवाँ वेद है। अत्यंत प्राचीन काल में वेदों के साथ पुराण भी प्रचलित थे जो यज्ञ आदि के अवसरों पर कहे जाते थे। कई बातें जो पुराण के लक्षणों में हैं, वेदों में भी हैं। जैसे, पहले असत् था और कुछ नहीं था यह सर्ग या सृष्टितत्व है; देवासुर संग्राम, उर्वशी पुरूरवा संवाद इतिहास है। महाभारत के आदि पर्व में (१.२३३) भी अनेक राजाओं के नाम और कुछ विषय गिनाकर कहा गया है कि इनके वृतांत विद्वान सत्कवियों द्वारा पुराण में कहे गए हैं। इससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। मनुस्मृति में भी लिखा है कि पितृकार्यों में वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराण आदि सुनाने चाहिए।[1,2,3]

अब प्रश्न यह होता है कि पुराण हैं किसके बनाए। शिवपुराण के अंतर्गत रेवा माहात्म्य में लिखा है कि अठारहों पुराणों के वक्ता सत्यवतीसुत व्यास हैं। यही बात जन साधारण में प्रचलित है। पर मत्स्यपुराण में स्पष्ट लिखा है कि पहले पुराण एक ही था, उसी से १८ पुराण हुए (५३.४)। ब्रह्मांड पुराण में लिखा है कि वेदव्यास ने एक पुराणसंहिता का

संकलन किया था। इसके आगे की बात का पता विष्णु पुराण से लगता है। उसमें लिखा है कि व्यास का एक 'लोमहर्षण' नाम का शिष्य था जो सूति जाति का था। व्यास जी ने अपनी पुराण संहिता उसी के हाथ में दी। लोमहर्षण के छह शिष्य थे— सुमति, अग्निवर्चा, मित्रयु, शांशपायन, अकृतव्रण और सावर्णी। इनमें से अकृतव्रण, सावर्णी और शांशपायन ने लोमहर्षण से पढ़ी हुई पुराणसंहिता के आधार पर और एक एक संहिता बनाई। वेदव्यास ने जिस प्रकार मंत्रों का संग्रहकर उन का संहिताओं में विभाग किया उसी प्रकार पुराण के नाम से चले आते हुए वृत्तों का संग्रह कर पुराणसंहिता का संकलन किया। उसी एक संहिता को लेकर सुत के चेलों के तीन और संहीताएँ बनाई। इन्हीं संहिताओं के आधार पर अठारह पुराण बने होंगे।

मत्स्य, विष्णु, ब्रह्मांड आदि सब पुराणों में ब्रह्मपुराण पहला कहा गया है, पर जो ब्रह्मपुराण आजकल प्रचलित है वह कैसा है यह पहले कहा जा चुका है। जो कुछ हो, यह तो ऊपर लिखे प्रमाण से सिद्ध है कि अठारह पुराण वेदव्यास के बनाए नहीं हैं। जो पुराण आजकल मिलते हैं उनमें विष्णुपुराण और ब्रह्मांडपुराण की रचना औरों से प्राचीन जान पड़ती है। विष्णुपुराण में 'भविष्य राजवंश' के अंतर्गत गुप्तवंश के राजाओं तक का उल्लेख है इससे वह प्रकरण ईसा की छठी शताब्दी के पहले का नहीं हो सकता। जावा के आगे जो बाली द्वीप है वहाँ के हिंदुओं के पास ब्रह्माण्डपुराण मिला है। इन हिंदुओं के पूर्वज ईसा की पाँचवी शताब्दी में भारतवर्ष में पूर्व के द्वीपों में जाकर बसे थे। बालीवाले ब्रह्माडपुराण में 'भविष्य राजवंश प्रकरण' नहीं है, उसमें जनमेजय के प्रपौत्र अधिसीमकृष्ण तक का नाम पाया जाता है। यह बात ध्यान देने की है। इससे प्रकट होता है कि पुराणों में जो भविष्य राजवंश है वह पीछे से जोड़ा हुआ है। यहाँ पर ब्रह्मांडपुराण की जो प्राचीन प्रतियाँ मिलती हैं देखना चाहिए कि उनमें भूत और वर्तमानकालिक क्रिया का प्रयोग कहाँ तक है। 'भविष्यराजवंश वर्णन' के पूर्व उनमें ये श्लोक मिलते हैं—

तस्य पुत्रः शतानीको बलबान् सत्यविक्रमः।

ततः सुर्त शतानीकं विप्रास्तमभ्यषेचयन्।।

पुत्रोश्वमेधदत्तो/?/भूत् शतानीकस्य वीर्यवान्।

पुत्रो/?/श्वमेधदत्ताद्वै जातः परपुरजयः।।

अधिसीमकृष्णो धर्मात्मा साम्पतोयं महायशाः।

यस्मिन् प्रशासति महीं युष्माभिरिदमाहृतम्।।

दुरापं दीर्घसत्रं वै त्रीणि दर्षाणि पुष्करम्

वर्षद्वयं कुरुक्षेत्रे द्दषद्वत्यां द्विजोत्तमाः।।

अर्थात्— उनके पुत्र बलवान् और सत्यविक्रम शतानीक हुए। पीछे शतानीक के पुत्र को ब्राह्मणों ने अभिषिक्त किया। शतानीक के अश्वमेधदत्त नाम का एक वीर्यवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। अश्वमेधदत्त के पुत्र परपुरंजय धर्मात्मा अधिसीमकृष्ण हैं। ये ही महाशय आजकल पृथ्वी का शासन करते हैं। इन्हीं के समय में आप लोगों ने पुष्कर में तीन वर्ष का और द्दषद्वती के किनारे कुरुक्षेत्र में दो वर्ष तक का यज्ञ किया है।

उक्त अंश से प्रकट है कि आदि ब्रह्मांडपुराण अधिसीमकृष्ण के समय में बना। इसी प्रकार विष्णुपुराण, मत्स्यपुराण आदि की परीक्षा करने से पता चलता है कि आदि विष्णुपुराण परीक्षित के समय में और आदि मत्स्यपुराण जनमेजय के प्रपौत्र अधिसीमकृष्ण के समय में संकलित हुआ।

पुराण संहिताओं से अठारह पुराण बहुत प्राचीन काल में ही बन गए थे, इसका पता लगता है। आपस्तंब धर्मसूत्र (२.२४.५) में भविष्यपुराण का प्रमाण इस प्रकार उदधृत है—

आभूत संप्लवात्ते स्वर्गजितः।

पुनः सर्गे बीजीर्था भवतीति भविष्यत्पुराणे।

यह अवश्य है कि आजकल पुराण अपने आदिम रूप में नहीं मिलते हैं। बहुत से पुराण तो असल पुराणों के न मिलने पर फिर से नए रचे गए हैं, कुछ में बहुत सी बातें जोड़ दी गई हैं।

प्रायः सब पुराण शैव, वैष्णव सम्प्रदाय और सौर संप्रदायों में से किसी न किसी के पोषक हैं, इसमें भी कोई संदेह नहीं। विष्णु, रुद्र, सूर्य आदि की उपासना वैदिक काल से ही चली आती थी, फिर धीरे धीरे कुछ लोग किसी एक देवता को प्रधानता देने लगे, कुछ लोग दूसरे को। इस प्रकार महाभारत के पीछे ही संप्रदायों का सूत्रपात हो चला। पुराणसंहिताएँ उसी समय में बनीं। फिर आगे चलकर आदिपुराण बने जिनका बहुत कुछ अंश आजकल पाए जानेवाले कुछ पुराणों के भीतर है।[4,5,6] पुराणों का उद्देश्य पुराने वृत्तों का संग्रह करना, कुछ प्राचीन और कुछ कल्पित कथाओं द्वारा उपदेश देना, देवमहिमा तथा तीर्थमहिमा के वर्णन द्वारा जनसाधारण में धर्मबुद्धि स्थिर रखना था। इसी से व्यास ने सूत (भाट या कथक्केड़) जाति के एक पुरुष को अपनी संकलित आदिपुराणसंहिता प्रचार करने के लिये दी।

विचार-विमर्श

ब्रह्म पुराण हिंदू धर्म के 18 पुराणों में से एक प्रमुख पुराण है। इसे पुराणों में महापुराण भी कहा जाता है। पुराणों की दी गयी सूची में इस पुराण को प्रथम स्थान पर रखा जाता है। कुछ लोग इसे पहला पुराण भी मानते हैं। इसमें विस्तार से सृष्टि जन्म, जल की उत्पत्ति, ब्रह्म का आविर्भाव तथा देव-दानव जन्मों के विषय में बताया गया है। इसमें सूर्य और चन्द्र वंशों के विषय में भी वर्णन किया गया है। इसमें ययाति या पुरु के वंश–वर्णन से मानव-विकास के विषय में बताकर राम-कृष्ण-कथा भी वर्णित है। इसमें राम और कृष्ण के कथा के माध्यम से अवतार के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए अवतारवाद की प्रतिष्ठा की गई है।[7,8,9]

इस पुराण में सृष्टि की उत्पत्ति, पृथु का पावन चरित्र, सूर्य एवं चन्द्रवंश का वर्णन, श्रीकृष्ण-चरित्र, कल्पान्तजीवी मार्कण्डेय मुनि का चरित्र, तीर्थों का माहात्म्य एवं अनेक भक्तिपरक आख्यानों की सुन्दर चर्चा की गयी है। भगवान् श्रीकृष्ण की ब्रह्मरूप में विस्तृत व्याख्या होने के कारण यह ब्रह्मपुराण के नाम से प्रसिद्ध है। [1] इस पुराण में साकार ब्रह्म की उपासना का विधान है। इसमें 'ब्रह्म' को सर्वोपरि माना गया है। इसीलिए इस पुराण को प्रथम स्थान दिया गया है। पुराणों की परम्परा

के अनुसार 'ब्रह्म पुराण' में सृष्टि के समस्त लोकों और भारतवर्ष का भी वर्णन किया गया है। कलियुग का वर्णन भी इस पुराण में विस्तार से उपलब्ध है। [2] ब्रह्म के आदि होने के कारण इस पुराण को 'आदिपुरण' भी कहा जाता है। व्यास मुनि ने इसे सर्वप्रथम लिखा है। इसमें दस सहस्र श्लोक हैं। प्राचीन पवित्र भूमि नैमिष अरण्य में व्यास शिष्य सूत मुनि ने यह पुराण समाहित ऋषि वृन्द में सुनाया था। इसमें सृष्टि, मनुवंश, देव देवता, प्राणि, पुथ्वी, भूगोल, नरक, स्वर्ग, मंदिर, तीर्थ आदि का निरूपण है। शिव-पार्वती विवाह, कृष्ण लीला, विष्णु अवतार, विष्णु पूजन, वर्णाश्रम, श्राद्धकर्म, आदि का विचार है।

सम्पूर्ण 'ब्रह्म पुराण' में २४५ अध्याय हैं। इसकी श्लोक संख्या लगभग १३,००० है। इस पुराण की कथा लोमहर्षण सूत जी एवं शौनक ऋषियों के संवाद के माध्यम से वर्णित है। यही कथा प्राचीन काल में ब्रह्मा ने दक्ष प्रजापति को सुनायी थी। [3]

महत्व

ब्रह्म पुराण का धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व है। साथ ही इसका पर्यटन की दृष्टि से भी महत्व है। इसमें अनेक तीर्थों- भद्र तीर्थ, पतत्रि तीर्थ, विप्र तीर्थ, भानु तीर्थ, भिल्ल तीर्थ आदि का विस्तार से वर्णन मिलता है। इसमें सृष्टि के आरंभ में हुए महाप्रलय के विषय में भी बताया गया है। इसमें मोक्ष-धर्म, ब्रह्म का स्वरूप और योग-विधि की भी विस्तृत जानकारी दी गई है। इसमें सांख्य और योग दर्शन की व्याख्या करके मोक्ष–प्राप्ति के उपायों पर प्रकाश डाला गया है। यह वैष्णव पुराणों में प्रमुख माना गया है।

आरंभ

ब्रह्मपुराण का आरंभ इस कथा के साथ होता है कि- प्राचीन काल की बात है कि नैमिषारण्य में मुनियों का आगमन हुआ। सभी ऋषि-मुनि वहां ज्ञानार्जन के लिए एकत्रित हुए। कुछ समय बाद वहां पर सूतजी का भी आगमन हुआ तो मुनियों ने सूतजी का आदर-सत्कार किया और कहा, हे भगवन् ! आप अत्यन्त ज्ञानी-ध्यानी हैं। आप हमें ज्ञान-भक्तिवर्धक पुराणों की कथा सुनाइए। यह सुनकर सूतजी बोले, आप मुनियों की जिज्ञासा अति उत्तम है और इस समय मैं आपको ब्रह्म पुराण सुनाऊंगा।

कथा

यह पुराण सब पुराणों में प्रथम और धर्म अर्थ काम और मोक्ष को प्रदान करने वाला है, इसके अन्दर नाना प्रकार के आख्यान है, देवता दानव और प्रजापतियों की उत्पत्ति इसी पुराण में बतायी गयी है। लोकेश्वर भगवान सूर्य के पुण्यमय वंश का वर्णन किया गया है, जो महापातकों के नाश को करने वाला है। इसमें ही भगवान रामचन्द्र के अवतार की कथा है, सूर्यवंश के साथ चन्द्रवंश का वर्णन किया गया है, श्रीकृष्ण भगवान की कथा का विस्तार इसी में है, पाताल और स्वर्ग लोक का वर्णन नरकों का विवरण सूर्यदेव की स्तुति कथा और पार्वती जी के जन्म की कथा का उल्लेख लिखा गया है।[10,11] दक्ष प्रजाप्ति की कथा और एकाम्रक क्षेत्र का वर्णन है। पुरुषोत्तम क्षेत्र का विस्तार के साथ किया गया है, इसी में श्रीकृष्ण चरित्र का विस्तारपूर्वक लिखा गया है, यमलोक का विवरण पितरों का श्राद्ध और उसका विवरण भी इसी पुराण में बताया गया है, वर्णों और आश्रमों का विवेचन भी कहा गया है, योगों का निरूपण सांख्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन ब्रह्मवाद का दिग्दर्शन और पुराण की प्रशंसा की गयी है। इस पुराण के दो भाग है और पढने सुनने से यह दीर्घता की ओर बढाने वाला है।

सूतजी ने मुनियों के आग्रह को स्वीकार करते हुए कहा, सर्वप्रथम मैं इस ब्रह्म को नमस्कार करता हूं जिसके द्वारा माया से परिपूर्ण यह समस्त संसार रचा गया है और जो प्रत्येक कल्प में लीन होकर फिर से उत्पन्न होता है। जिसका स्मरण करके ऋषि, मुनि, देव, मनुष्य, मोक्ष प्राप्त करते हैं।

वह विष्णु, अविकारी, शुद्ध परमात्म, शाश्वत, सर्वव्यापक, अजन्मा, हिरण्यगर्भ हरि, शंकर और वासुदेव-अनेक नामों से जाता है। इसी ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है। सृष्टि रचना के रूप में वह तेजस्वी ब्रह्म है जिसके द्वारा पहले महत् तत्त्व उत्पन्न हुआ। उससे अहंकार, फिर अहंकार से पंचमहाभूतों की उत्पत्ति हुई। पंचमहाभूतों से अनेक भेदाभेद पैदा हुए। भगवान् स्वयंभू ने सृष्टि की उत्पत्ति के लिए सबसे पहले 'नार' जल की उत्पत्ति की। फिर उसमें बीज डाला गया। उससे परम पुरुष की नाभि में एक अंडा निकला। यह अंडा और कुछ नहीं था ब्रह्म का ज्ञानकोश ही था। इस अंडे से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई। इस अंडे को भगवान नारायण द्वारा स्वर्ग और पृथ्वी में विभक्त कर दिया गया। इसके बीच आकाश बना और भगवान के द्वारा ही दशों दिशाओं को धारण किया गया।

दशों दिशाओं के बाद काल, मन, वाणी और काम, क्रोध तथा रति की रचना हुई। फिर प्रजापतियों की रचना हुई। इसमें-मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य पुलह कृतु और वसिष्ठ के नाम हैं। ये ऋषि मानस सृष्टि के रूप में उत्पन्न किये गए।

मानसपुत्रों की सृष्टि के बाद भगवान शिव और फिर उसके बाद सनत्कुमार उत्पन्न हुए। इस सात ऋषियों से ही शेष प्रजा का विकास हुआ। इनमें रुद्रगण भी सम्मिलित हैं। फिर बिजली, वज्र, मेघ, धनुष खड्ग पर्जन्य आदि का निर्माण हुआ। यज्ञों के सम्पादन के लिए वेदों की ऋचाओं की सृष्टि हुई। साध्य देवों की उत्पत्ति के बाद भूतों का जन्म हुआ। किन्तु ऋषिभाव के कारण सृष्टि का विकास नहीं हुआ, इसलिए ब्रह्मा ने मैथुनी सृष्टि करने का विचार किया और स्वयं के दो भाग किये। दक्षिणी वाम भाग से पुरुष और स्त्री की सृष्टि हुई। इनके प्रारम्भिक नाम मनु और शतरूपा रखे थे। इस मनु ने ही मैथुनी सृष्टि का विकास किया। इसी मनु के नाम पर मन्वन्तरों का रूप स्वीकार किया गया।

मनु और शतरूपा से वीर नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वीर की पत्नी कुर्दम-पुत्री काम्या से प्रियव्रत और उत्तानपाद उत्पन्न हुए। इनके साथ सम्राट कुक्षि, प्रभु और विराट-पुट पैदा हुए। पूर्व प्रजापति अत्रि ने उत्तानपाद को गोद ले लिया। इसकी पत्नी सुनृता थी। उससे चार पुत्र हुए, इनमें एक ध्रुवनामधारी हुआ। ध्रुव ने पांच वर्ष की अवस्था में ही तप करके अनेक देवताओं को प्रसन्न किया और पत्नी से श्लिष्ट तथा भव्य नाम के दो पुत्र पैदा हुए। श्लिष्ट ने सुच्छाया से रिपु, रिपुंजय, वीर, वृकल, वृकतेजा पुत्र उत्पन्न किए। इसके बाद वंश विकास के लिए रिपु

ने चक्षुष को जन्म दिया, चक्षुष से चाक्षुष मनु हुए और मनु ने वैराज और वैराज की कन्या से-कुत्सु, पुरु, शतद्युम्न, तपस्वी, सत्यवाक्, कवि, अग्निष्टुत, अतिराम, सुद्युम्न, अभिमन्यु-ये दश पुत्र हुए। फिर इसकी परम्परा में अंग और सुनीथा से वेन नाम पुत्र की उत्पत्ति हुई। बेन के दुष्ट व्यवहार के कारण ऋषियों ने उसे मार डाला। किन्तु उसकी मृत्यु से शासन की समस्या उठ खड़ी हुई।

राज्य को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए प्रजा को आतताइयों के निरंकुश हो जाने की आशंका को देखते हुए मुनियों ने वेन के दाहिने हाथ का मंथन किया। इससे धनुष और कवच-कुंडल सहित पृथु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस तेजस्वी यशस्वी और प्रजा के कष्टों को हरने वाले पृथु ने अपने राज्यकाल में सर्वत्र अपनी कीर्ति फैला दी। राजसूय यज्ञ करके चक्रवर्ती सम्राट का पद पाया। परम ज्ञानी और निपुण सूत और मागध इस पृथु की ही संतान हुए। राजा पृथु ने पृथ्वी को अपने परिश्रम से अन्नदायिनी और उर्वरा बनाया। इसके इस परिश्रम और प्रजाहित भाव के कारण ही उसे लोग साक्षात् विष्णु मानने लगे।

राजा पृथु के दो पुत्र उत्पन्न हुए, अन्तर्धी और पाती। ये बड़े धर्मात्मा थे। इसमें अन्तर्धी का विवाह सिखण्डिनी के साथ हुआ जिससे हविर्धान और इनसे धिष्णा के साथ छः पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें प्राचीन बर्हि प्रजापति हुए जिन्होंने समुद्र-तनया से विवाह करके दस प्राचेतस उत्पन्न किए। इनकी तपस्या से वृक्ष आरक्षित हो गए। तप, तेज न सह पाने के कारण प्रजा निश्तेज हो गई। समाधि टूटने पर जब मुनियों ने स्वयं को चारों दिशाओं में असीमित बेलों ओर झाड़ियों से घिरा पाया तो रुष्ट होकर समूची वनस्पतियों को अपनी क्रोधाग्नि से दग्ध करना शुरू कर दिया। इस विनाश को देखकर सोम ने अपनी मारिषा नाम की पुत्री को प्रचेताओं के समक्ष भार्या रूप में प्रस्तुत करने का प्रस्ताव किया। फलस्वरूप मुनियों का क्रोध शान्त हो गया।

प्रजापति दक्ष प्रचेताओं व मारिषा से उत्पन्न पुत्र थे। जिन्होंने इस समूची चल-अचल, मनुष्य पक्षी, पशु आदि की सृष्टि की और कन्याओं को जन्म दिया। इस कन्याओं में ही 10 धर्म के साथ, 13 कश्यप के साथ और 27 सोम के साथ ब्याही गईं। समस्त दैत्य, गन्धर्व, अप्सराएं, पक्षी, पशु सब सृष्टि इन्हीं कन्याओं से उत्पन्न हुई। मुनियों की जिज्ञासा को देखते हुए सूतजी ने प्रजापति दक्ष और उनकी पत्नी की उत्पत्ति ब्रह्माजी के दाहिने और वाम अंगष्ट से बताते हुए कहा, वस्तुतः यह समूचा कर्म है, इसमें दक्ष और अन्य अनेक राजा उत्पन्न होते रहते हैं और विलीन होते रहते हैं। पूर्वकाल में ज्येष्ठता का आधार तप को माना जाता था और इसी के प्रभाव से ऋषि मुनि् प्रतिष्ठा और उच्च स्थान पाते थे। महर्षि हो जाते थे।

ब्रह्माजी ने जब मानवी सृष्टि से प्रजा-वृद्धि में अभीष्ट फल होते न देखा तो मैथुनी सृष्टि प्रारम्भ की। इस क्रम में ब्रह्माजी के पुत्र नारद ने कश्यप मुनि परिणीता दक्ष-पुत्री के उदर से जन्म लिया। ये हर्यश्व कहलाए और सृष्टि रचना के लिए सम्पूर्ण पृथ्वी की जानकारी पाने के लिए अन्य अनेक दिशाओं में चले गये। इनके नष्ट होने पर दक्ष प्रजापति ने पुनः अन्य पुत्रों को जन्म दिया। इनका भी पूर्व पुत्रों की भांति अन्त हुआ। अपने पुत्रों को फिर नष्ट होता देखकर दक्ष ने वैरिणी के गर्भ से 60 कन्याओं को जन्म दिया, जिनको ऋषियों को सौंप दिया गया। इनसे आगे सृष्टि का पूरा विकास, रेखांकित होता है।

धर्म के साथ दक्ष की दस पुत्रियों का विवाह हुआ जिनके नाम थे अरुन्धती वशु, यामी, लम्बा, भानु, मरुत्वती, संकल्पा मुहूर्ता, साध्या तथा विश्वा। विश्वा से विश्वदेव और साध्या से साध्यदेव उत्पन्न हुए। इसी प्रकार मरुत्वान वसुगण, भानुगण, घोष, नागवीथी, मुहूर्चन तथा पृथ्वी के सभी विषयों और संकल्पों से विश्वात्मा संकल्प उत्पन्न हुए। सोम के साथ नक्षत्र नाम की पत्नियों से वंश क्रम में आपस्तंभ मुनि, धुव से काल, ध्रुव से हुतद्रव्य, अनिल से मनोजव और अनल से कार्तिकेय, प्रत्यूष से क्षमावान तथा प्रभात से विश्वकर्मा का जन्म हुआ। कश्यपजी द्वारा सुरभि से एकादश रुद्र उत्पन्न हुए। कश्यप मुनि की अदिति, दिति, दनु, अरिष्टा, सुरसा, खसा, सुरभि, विनता, ताम्रा, कोचवषा इला, कद्रू और मुनि पत्नियां हुईं। इनमें अदिति के द्वारा 12 पुत्र उत्पन्न हुए और दिति के गर्भ से हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष दो पुत्र तथा सिंहिका नाम की पुत्री उत्पन्न हुई। इस कन्या ने विप्रचित के वीर्य से रौहिकेय को जन्म दिया।

हिरण्यकशिपु के यहां ह्लाद अनुह्लाद प्रहलाद और संह्लाद चार पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें प्रह्लाद अपनी देव-प्रवृत्तियों के कारण अधिक प्रसिद्ध हुआ। इसके पुत्र विरोचन के बलि आदि क्रम में बाण, धृतराष्ट्र, सूर्य, चन्द्रमा, कुंभ, गर्दभाक्ष और कुक्षि आदि एक सौ पुत्र उत्पन्न हुए। बाण बलशाली और शिवभक्त था, उसने प्रथम कल्प में शिवजी को प्रसन्न करके उनके पक्षि भाग में विचरण करने का वरदान मांगा। हिरण्याक्ष के भी अत्यन्त बलशाली और तपस्वी सौ पुत्र हुए। अनुह्लाद के मुक और तुहुण्ड पुत्र हुए। संह्लाद के तीन करोड़ पुत्र हुए। इस तरह दिति के वंश ने विकास किया। महर्षि कश्यप की पत्नी दनु के गर्भ से दानव, केतु आदि उत्पन्न हुए। इनमें विप्रचित प्रमुख था। ये सभी दानव बहुत बलशाली हुए और उन्होंने अपने वंश का असीमित विस्तार किया। कश्यपजी ने सृष्टि रचना करते हुए ताम्रा से छः, क्रोचवशा से बाज, सारस, गृध्र तथा रुचि आदि पक्षी जलचर और पशु उत्पन्न किए। विनता से गरुड़ और अरुण, सुरसा से एक हजार सर्प कद्रू से काद्रवेय, सुरभि से गायें, इला से वृक्ष, लता आदि, खसा से यक्षों और राक्षसों तथा मुनि ने अप्सराओं और अरिष्टा ने गन्धर्वों को उत्पन्न किया। यह सृष्टि अपनी अनेक योनियों में फैलती हुई आगे बढ़ती रही।

देवताओं और दानवों में संघर्ष होने लगा और प्रतिस्पर्द्धा इतनी बढ़ी कि दानव नष्ट होने लगे। दिति ने अपने वंश को इस प्रकार नष्ट होते देख कश्यपजी को प्रसन्नकर इन्द्र आदि देवों को दंडित करने वाले की याचना से गर्भ धारण किया। ईर्ष्यालु इन्द्र दिति के इस मनोरथ को खंडित करने के भाव से किसी न किसी प्रकार दिति के व्रत को तोड़ना चाहता था क्योंकि कश्यपजी ने यह वरदान दिया था कि गर्भवती दिति यत्नपूर्ण पवित्रता से नियम पालन करते हुए आचरण करेगी तो उसका मनोरथ अवश्य पूरा होगा। अवसर ही खोज में लगे इन्द्र ने एक बार संयम के बिना हाथ धोए ही सोई दिति की कोख में प्रवेश कर लिया। वह उसके गर्भ के सात टुकड़े कर दिये। इससे भी संतोष न मिलने पर दिति के गर्भ को पूर्ण विनष्ट करने के लिए प्रत्येक टुकड़े के सात सात

खंड कर दिये। उन खंडों ने जब इन्द्र से उनके प्रति किसी प्रकार की शत्रुता न रखने का अनुरोध किया तो इन्द्र ने उन्हें छोड़ दिया। वे खंड ही मरुद्गण नाम के देव कहलाए और इन्द्र के सहायक हुए। कश्यपजी ने दाक्षायणी से विवस्वान नाम पुत्र को जन्म दिया। त्वष्टा की पुत्री संज्ञा से विवस्वान का विवाह हुआ जिसमें श्रद्धादेव और यम नामक दो पुत्रों और यमुना नाम की पुत्री को जन्म दिया। संज्ञा विवस्वान के तेज को न सह सकी और अपनी सखी छाया को प्रतिमूर्ति बनाकर और अपनी संतानें उसे सौंपकर अपने पिता के पास चली गयी।

पिता ने उसके इस प्रकार आगमन को अनुचित कहते हुए उसे वापस लौटा दिया। वापस लौटने पर अश्वी का रूप धारण कर संज्ञा वन में विचरने लगी। विवस्वान ने छाया पत्नी से सावर्णि मनि और शनैश्चर नाम के दो पुत्र उत्पन्न किए। वह अपने इन नवजात पुत्रों को इतना प्रेम करती थी कि संज्ञा से उत्पन्न यम आदि इसे सौतेला व्यवहार अनुभव करने लगे और प्रतिक्रिया स्वरूप यम ने छाया को लंगड़ी हो जाने का शाप दिया। विवस्वान ने जब यह जाना तो माता के प्रति ऐसा व्यवहार न करने का आदेश दिया। दूसरी और जब संज्ञा रूपी छाया से इस पक्षपात का कारण पूछा तो उन्हें स्थिति का ज्ञान हो गया। संज्ञा की खोज में जब विवस्वान त्वष्टा मुनि के आश्रम में गया तो वहां उसे संज्ञा का अश्वी के रूप में उसी आश्रम में निवास का पता चला।[10,11]

अपने तेज को शांत कर यौगिक क्रिया द्वारा रूप प्राप्त करके उसने अश्व का रूप धारण कर संज्ञा से मैथुन की चेष्टा की। संज्ञा पतिव्रता थी, वह पर पुरुष के साथ समागम कैसे कर सकती थी ? किन्तु जब उसे सत्य का पता चला तो विवस्वान द्वारा स्खलित वीर्य को उसने नासिका में ग्रहण कर लिया। जिसके फलस्वरूप नासत्य और दस्र नाम के दो अश्वनीकुमार जन्मे। छाया के त्याग से प्रसन्न होकर विवस्वान ने सावर्णि को लोकपाल मनु का और शनैश्चर को ग्रह का पद प्रदान किया। यह सावर्णि ही आगे चलकर सूर्य-वंश का स्वामी बना। सावर्णि के वंश में इक्ष्वाकु, नाभाग आदि नौ पुत्र हुए जिनके, जन्म पर मित्रावरुणों का पूजन किया गया। फलस्वरूप उत्पन्न इला नाम की कन्या से मनु ने अपनी अनुगमन करने को कहा। मित्रावरुण द्वारा प्रसन्न होकर प्राप्त वर के फलस्वरूप मनु से इला द्वारा सुद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इला से मार्ग में लौटते हुए बुध ने रति की कामना की जिसके वीर्य से पुरुरवा का जन्म हुआ। इसने ही सुद्युम्न का रूप धारण किया। जिसके आगे उत्कल, गय और विनिताश्व पुत्र हुए। इन्होंने उत्कला, गया और पश्चिमा को क्रमशः अपनी राजधानी बनाया।

मनु ने अपने श्रेष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को पृथ्वी के दस भागों में मध्य भाग सौंप दिया। इस प्रकार मनुपुत्रों का विकास और प्रसार हुआ। ब्रह्मलोक का प्रभाव इतना अद्भुत होता है कि वहां रुग्णता, व्याधि, चिन्ता, जरा, शोक, क्षुधा अथवा प्यास आदि के लिए कोई स्थान नहीं। यहां ऋतुएं भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं पैदा करतीं। मनु के पुत्र प्रांश के वंश में रैवत बड़े कुशल और बलशाली हुए हैं। इनके बारे में यह कहा जाता है कि इनके स्वर्ग सिधारने पर राक्षसों ने उत्पात करना शुरू कर दिया था और इनके राज्य पर अधिकार कर लिया था। इनके भाई बन्धु इनके आतंक से घबराकर इधर-उधर बिखर गये थे। इन्हीं से शर्याति क्षत्रियों की वंश परम्परा आगे बढ़ी। इनमें रिष्ट के दो पुत्रों ने पहले वणिक धर्म अपनाया बाद में ब्राह्मणत्व को प्राप्त किया। पृषध्न ने अनजाने में गौहत्या के अपराध से शूद्रत्व प्राप्त किया।

परिणाम

विष्णुपुराण अट्ठारह पुराणों में अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्राचीन है। यह श्री पराशर ऋषि द्वारा प्रणीत है। इसके प्रतिपाद्य भगवान विष्णु हैं, जो सृष्टि के आदिकारण, नित्य, अक्षय, अव्यय तथा एकरस हैं। इस पुराण में आकाश आदि भूतों का परिमाण, समुद्र, सूर्य आदि का परिमाण, पर्वत, देवतादि की उत्पत्ति, मन्वन्तर, कल्प-विभाग, सम्पूर्ण धर्म एवं देवर्षि तथा राजर्षियों के चरित्र का विशद वर्णन है।[1] भगवान विष्णु प्रधान होने के बाद भी यह पुराण विष्णु और शिव के अभिन्नता का प्रतिपादक है। विष्णु पुराण में मुख्य रूप से श्रीकृष्ण चरित्र का वर्णन है, यद्यपि संक्षेप में राम कथा का उल्लेख भी प्राप्त होता है।

अष्टादश महापुराणों में श्री विष्णुपुराण का स्थान बहुत ऊँचा है। इसमें अन्य विषयों के साथ भूगोल, ज्योतिष, कर्मकाण्ड, राजवंश और श्रीकृष्ण-चरित्र आदि कई प्रंसगों का बड़ा ही अनूठा और विशद वर्णन किया गया है। श्री विष्णु पुराण में भी इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, भगवान विष्णु एवं माता लक्ष्मी की सर्वव्यापकता, ध्रुव प्रह्लाद, वेनु, आदि राजाओं के वर्णन एवं उनकी जीवन गाथा, विकास की परम्परा, कृषि गोरक्षा आदि कार्यों का संचालन, भारत आदि नौ खण्ड मेदिनी, सप्त सागरों के वर्णन, अद्यः एवं अर्द्ध लोकों का वर्णन, चौदह विद्याओं, वैवस्वत मनु, इक्ष्वाकु, कश्यप, पुरुवंश, कुरुवंश, यदुवंश के वर्णन, कल्पान्त के महाप्रलय का वर्णन आदि विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है। भक्ति और ज्ञान की प्रशान्त धारा तो इसमें सर्वत्र ही प्रच्छन्न रूप से बह रही है।

यद्यपि यह पुराण विष्णुपरक है तो भी भगवान शंकर के लिये इसमे कहीं भी अनुदार भाव प्रकट नहीं किया गया। सम्पूर्ण ग्रन्थ में शिवजी का प्रसंग सम्भवतः श्रीकृष्ण-बाणासुर-संग्राम में ही आता है, वहाँ स्वयं भगवान कृष्ण महादेवजी के साथ अपनी अभिन्नता प्रकट करते हुए श्रीमुखसे कहते हैं-

त्वया यदभयं दत्तं तद्दत्तमखिलं मया। मत्तोऽविभिन्नमात्मानं द्रुष्टुमर्हसि शंकर।

योऽहं स त्वं जगच्चेदं सदेवासुरमानुषम्। मत्तो नान्यदशेषं यत्तत्वं ज्ञातुमिहार्हसि। अविद्यामोहितात्मानः पुरुषा भिन्नदर्शिनः। वन्दति भेदं पश्यन्ति चावयोरन्तरं हर॥

कथा एवं विस्तार

भगवान विष्णु

विस्तार

इस पुराण में इस समय सात हजार श्लोक उपलब्ध हैं। वैसे कई ग्रन्थों में इसकी श्लोक संख्या तेईस हजार बताई जाती है।[2] विष्णु पुराण में पुराणों के पांचों लक्षणों अथवा वर्ण्य-विषयों-सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित का वर्णन है। सभी विषयों का सानुपातिक

उल्लेख किया गया है। बीच-बीच में अध्यात्म-विवेचन, कलिकर्म और सदाचार आदि पर भी प्रकाश डाला गया है।

कथा

यह एक वैष्णव महापुराण है, यह सब पातकों का नाश करने वाला है। इसकी कथा निम्नलिखित भागों मे वर्णित है-

पूर्व भाग-प्रथम अंश

इसके पूर्वभाग में शक्ति नन्दन पराशर ने मैत्रेय को छः अंश सुनाये है, उनमें प्रथम अंश में इस पुराण की अवतरणिका दी गयी है। आदि कारण सर्ग देवता आदि जी उत्पत्ति समुद्र मन्थन की कथा दक्ष आदि के वंश का वर्णन ध्रुव तथा पृथु का चरित्र प्राचेतस का उपाख्यान प्रहलाद की कथा और ब्रह्माजी के द्वारा देव तिर्यक मनुष्य आदि वर्गों के प्रधान प्रधान व्यक्तियो को पृथक पृथक राज्याधिकार दिये जाने का वर्णन इन सब विषयों को प्रथम अंश कहा गया है।

पूर्व भाग-द्वितीय अंश

प्रियव्रत के वंश का वर्णन द्वीपों और वर्षों का वर्णन पाताल और नरकों का कथन, सात स्वर्गों का निरूपण अलग अलग लक्षणों से युक्त सूर्यादि ग्रहों की गति का प्रतिपादन भरत चरित्र मुक्तिमार्ग निदर्शन तथा निदाघ और ऋभु का संवाद ये सब विषय द्वितीय अंश के अन्तर्गत कहे गये हैं।

पूर्व भाग-तीसरा अंश

मन्वन्तरों का वर्णन वेदव्यास का अवतार, तथा इसके बाद नरकों से उद्धार का वर्णन कहा गया है। सगर और औौर्ब के संवाद में सब धर्मो का निरूपण श्राद्धकल्प तथा वर्णाश्रम धर्म सदाचार निरूपण तथा माहामोह की कथा, यह सब तीसरे अंश में बताया गया है, जो पापों का नाश करने वाला है।

पूर्व भाग-चतुर्थ अंश

सूर्यवंश की पवित्र कथा, चन्द्रवंश का वर्णन तथा नाना प्रकार के राजाओं का वृतान्त चतुर्थ अंश के अन्दर है।

पूर्व भाग-पंचम अंश

श्रीकृष्णावतार विषयक प्रश्न, गोकुल की कथा, बाल्यावस्था में श्रीकृष्ण द्वारा पूतना आदि का वध, कुमारावस्था में अघासुर आदि की हिंसा, किशोरावस्था में कंस का वध, मथुरापुरी की लीला, तदनन्तर युवावस्था में द्वारका की लीलायें समस्त दैत्यों का वध, भगवान के प्रथक प्रथक विवाह, द्वारका में रहकर योगीश्वरों के भी ईश्वर जगन्नाथ श्रीकृष्ण के द्वारा शत्रुओं के वध के द्वारा पृथ्वी का भार उतारा जाना, और अष्टावक्र जी का उपाख्यान ये सब बातें पांचवें अंश के अन्तर्गत हैं।

पूर्व भाग-छठा अंश

कलियुग का चरित्र चार प्रकार के महाप्रलय तथा केशिध्वज के द्वारा खाण्डिक्य जनक को ब्रह्मज्ञान का उपदेश इत्यादि छठा अंश कहा गया है।

उत्तरभाग

इसके बाद विष्णु पुराण का उत्तरभाग प्रारम्भ होता है, जिसमें शौनक आदि के द्वारा आदरपूर्वक पूछे जाने पर सूतजी ने सनातन विष्णुधर्मोत्तर नामसे प्रसिद्ध नाना प्रकार के धर्मो कथायें कही है, अनेकानेक पुण्यव्रत यम नियम धर्मशास्त्र अर्थशास्त्र वेदान्त ज्योतिष वंशवर्णन के प्रकरण स्तोत्र मन्त्र तथा सब लोगों का उपकार करने वाली नाना प्रकार की विद्यायें सुनायी गयीं है, यह विष्णुपुराण है, जिसमें सब शास्त्रों के सिद्धान्त का संग्रह हुआ है। इसमे वेदव्यासजी ने वाराकल्प का वृतान्त कहा है, जो मनुष्य भक्ति और आदर के साथ विष्णु पुराण को पढते और सुनते है, वे दोनों यहां मनोवांछित भोग भोगकर विष्णुलोक में जाते है।

रचना काल

विष्णुपुराण की रचना काल का ठीक ज्ञान नहीं है। इस पर विद्वान एकमत नहीं हैं। विभिन्न विद्वानों ने इसका रचनाकाल जो माना है, वह निम्नलिखित है-

रामचन्द्र दीक्षित (1951) : 700-300 ईसापूर्व

विन्सेंट स्मिथ (1908) : 400-300 ईसापूर्व

मारिज विण्टरनित्ज (१९३२) : सम्भवतः प्रथम सहस्राब्दी का आरम्भिक काल

राजेन्द्रचन्द्र हाजरा (1940) : 275-325 ई०

वेंडी डोनिगर (Wendy Doniger ; 1988) : 450 ई०

चिन्तामण विनायक वैद्य (1925) : ~9वीं शताब्दी

रॉय (1968) : ९वीं शताब्दी के बाद

होरेस हेमन विल्सन (१८६४) : इन्होंने यह स्वीकार किया गया कि परम्परा इस ग्रन्थ को पहली सहस्राब्दी ईसा पूर्व का बताती है और इस ग्रन्थ की जड़ें वैदिक साहित्य में हैं,[5,6,7] लेकिन उनके विश्लेषण के बाद सुझाव उन्होंने सुझाव दिया गया कि इसकी वर्तमान पांडुलिपियां ११वीं शताब्दी की हो सकती हैं।

निष्कर्ष

शिव पुराण सभी पुराणों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण व सबसे ज्यादा पढ़ी जाने वाली पुराणों में से एक है। भगवान शिव के विविध रूपों, अवतारों, ज्योतिर्लिंगों, भक्तों और भक्ति का विशद् वर्णन किया गया है।[1] इसमें शिव के कल्याणकारी स्वरूप का तात्त्विक विवेचन, रहस्य, महिमा और उपासना का विस्तृत वर्णन है।[2] । शिव पुराण में शिव को पंचदेवों में प्रधान अनादि सिद्ध परमेश्वर के रूप में स्वीकार किया गया है। शिव-महिमा, लीला-कथाओं के अतिरिक्त इसमें पूजा-पद्धति, अनेक ज्ञानप्रद आख्यान और शिक्षाप्रद कथाओं का सुन्दर संयोजन है। इसमें भगवान शिव के भव्यतम व्यक्तित्व का गुणगान किया गया है। शिव- जो स्वयंभू हैं, शाश्वत हैं, सर्वोच्च सत्ता है, विश्व चेतना हैं और ब्रह्माण्डीय अस्तित्व के आधार हैं।

'शिव पुराण' का सम्बन्ध शैव मत से है। इस पुराण में प्रमुख रूप से शिव-भक्ति और शिव-महिमा का प्रचार-प्रसार किया गया है। प्रायः सभी पुराणों में शिव को त्याग, तपस्या, वात्सल्य तथा करुणा की मूर्ति बताया गया है। कहा गया है कि शिव सहज ही प्रसन्न हो जाने वाले

एवं मनोवांछित फल देने वाले हैं। किन्तु 'शिव पुराण' में शिव के जीवन चरित्र[3] पर प्रकाश डालते हुए उनके रहन-सहन, विवाह और उनके पुत्रों की उत्पत्ति के विषय में विशेष रूप से बताया गया है।[4]

कथा एवं विस्तार

इस पुराण में २४,००० श्लोक है तथा इसके क्रमश: ६ खण्ड है[5]-

- विद्येश्वर संहिता
- रुद्र संहिता
- कोटिरुद्र संहिता
- कैलास संहिता
- वायु संहिता

चोल वंश कालीन नटराज शिव शंकर की मूर्ति

'शिवपुराण' एक प्रमुख तथा सुप्रसिद्ध पुराण है, जिसमें परात्मपर परब्रह्म परमेश्वर के 'शिव' (कल्याणकारी) स्वरूप का तात्त्विक विवेचन, रहस्य, महिमा एवं उपासना का सुविस्तृत वर्णन है[6]। भगवान शिवमात्र पौराणिक देवता ही नहीं, अपितु वे पंचदेवों में प्रधान, अनादि सिद्ध परमेश्वर हैं एवं निगमागम आदि सभी शास्त्रों में महिमामण्डित महादेव हैं। वेदों ने इस परमतत्त्व को अव्यक्त, अजन्मा, सबका कारण, विश्वपंच का स्रष्टा, पालक एवं संहारक कहकर उनका गुणगान किया है। श्रुतियों ने सदा शिव को स्वयम्भू, शान्त, प्रपंचातीत, परात्पर, परमतत्त्व, ईश्वरों के भी परम महेश्वर कहकर स्तुति की है। 'शिव' का अर्थ ही है- 'कल्याणस्वरूप' और 'कल्याणप्रदाता'। परमब्रह्म के इस कल्याण रूप की उपासना उटच्च कोटि के सिद्धों, आत्मकल्याणकामी साधकों एवं सर्वसाधारण आस्तिक जनों-सभी के लिये परम मंगलमय, परम कल्याणकारी, सर्वसिद्धिदायक और सर्वश्रेयस्कर है। शास्त्रों में उल्लेख मिलता है कि देव, दनुज, ऋषि, महर्षि, योगीन्द्र, मुनीन्द्र, सिद्ध, गन्धर्व ही नहीं, अपितु ब्रह्मा-विष्णु तक इन महादेव की उपासना करते हैं। इस पुराण के अनुसार यह पुराण परम उत्तम शास्त्र है। इसे इस भूतल पर भगवान शिव का वाङ्मय स्वरूप समझना चाहिये और सब प्रकार से इसका सेवन करना चाहिये। इसका पठन और श्रवण सर्वसाधनरूप है। इससे शिव भक्ति पाकर श्रेष्ठतम स्थिति में पहुँचा हुआ मनुष्य शीघ्र ही शिवपद को प्राप्त कर लेता है। इसलिये सम्पूर्ण यत्न करके मनुष्यों ने इस पुराण को पढ़ने की इच्छा की है- अथवा इसके अध्ययन को अभीष्ट साधन माना है। इसी तरह इसका प्रेमपूर्वक श्रवण भी सम्पूर्ण मनोवंछित फलों के देनेवाला है। भगवान शिव के इस पुराण को सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है तथा इस जीवन में बड़े-बड़े उत्कृष्ट भोगों का उपभोग करके अन्त में शिवलोक को प्राप्त कर लेता है। यह शिवपुराण नामक ग्रन्थ चौबीस हजार श्लोकों से युक्त है। सात संहिताओं से युक्त यह दिव्य शिवपुराण परब्रह्म परमात्मा के समान विराजमान है [9,10,11]और सबसे उत्कृष्ट गति प्रदान करने वाला है।

संदर्भ

[1] "गीताप्रेस डाट ओरजी". मूल *से 25 जून 2010 को पुरालेखित.* अभिगमन तिथि 12 मई 2010.

[2] "भारतकोष". मूल *से 26 जून 2010 को पुरालेखित.* अभिगमन तिथि 12 मई 2010.

[3] "गीताप्रेस डाट ओरजी, ब्रह्म पुराण". मूल *से 25 जून 2010 को पुरालेखित.* अभिगमन तिथि 12 मई 2010.

[4] "गीताप्रेस डाट काम". मूल से 23 जून 2010 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 13 मई 2010.

[5] "ब्रज डिस्कवरी". मूल से 12 मई 2011 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 6 मई 2010.

[6] गीताप्रेस डाट काम

[7] Dalal, R. (२०१०). Hinduism: An Alphabetical Guide (अंग्रेज़ी भाषा में). Penguin Books. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-0-14-341421-6. अभिगमन तिथि २७ मार्च २०२०.

[8] Awasthi, V.B. (१९७४). Rāmacaritamānasa para paurāṇika prabhāva (लातवियाई में). Dillī Pustaka Sadana. अभिगमन तिथि २७ मार्च २०२०.

[9] शिव पुराण-गीताप्रेस गोरखपुर

[10] Śarmā, P.M.; Vyāsa, V.; Siṅgha, P.; Prakāśa, V. (२००८). Shiva Purana - Hindi (स्पेनिश में). Dreamland Publications. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-8451-150-5. अभिगमन तिथि २७ मार्च २०२०.

[11] Singh, Pritpal (2008). Saint Veda Vyasa's the Shiva Purana (अंग्रेज़ी भाषा में). India: Dreamland. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-8451-042-3.